THE ECONOMIC TIMES

Date:20-03-20

Let NGOs Execute CSR, Under Supervision

ET Editorials

The proposed amendments to the Companies (Corporate Social Responsibility Policy) Rules are an attempt to ensure that companies are serious about the mandatory contribution and to prevent fraudulent compliance that allows CSR funds to be diverted to the company management's personal accounts. The intent of the amendments is laudable but some provisions will do more harm than good. To ensure that the mandatory 2% of profits to be spent on CSR yield the best outcomes, the government should consider tightening oversight without limiting the kinds of entities eligible to implement these projects.

The current rules allow registered trusts and societies with an established track record to undertake CSR activities, apart from through a Section 8 company set up for the purpose. There have been instances of companies using trusts/ non-government organisations nominated to carry out CSR to, in reality, funnel money to the managements' private accounts. To close this misuse, entities such as those registered under the Societies Registration Act of 1860 for CSR activities have been dropped. While some such entities have been complicit in malpractice, it is a mistake to tar all such bodies with the same brush. Norms for more stringent reporting, greater oversight and regular auditing for NGOs will close this loophole as effectively, while allowing companies to fulfil their CSR obligations.

NGOs have been critical for grassroots implementation in the social and development sectors. The other proposed changes are focused on increasing the involvement and responsibility of the company's board in implementing CSR activities, norms for the unspent funds and use of assets and profits accruing from CSR activities. These changes will bring greater accountability for the companies.

Date:20-03-20

Lessons From Nature

The Covid-19 crisis provides an opportunity for humankind to ponder on our journey so far

Ram Nath Kovind, [The writer is President of India]

The Covid-19 outbreak has created an unprecedented situation across the world. Humankind is no stranger to calamitous outbreaks of diseases. But this is the first viral outbreak of this nature and scale in our lifetime.

The outbreak has forced us to keep a respectful distance from others. This isolation, self-imposed or medically mandated, can be taken as an opportunity to ponder on our journey so far and the path to be taken in the future.

We all know that hygiene is the first and obvious lesson. Precaution is the only cure for this outbreak, with doctors advising us basic hygiene along with social distancing. It is easy to underestimate the significance of sanitation and cleanliness. In 1896, Mahatma Gandhi was visiting India, and plague broke out in Bombay. He offered his services to the State, and the offer was accepted. As he was in Rajkot, he volunteered there. Do you know what he did as a volunteer? He inspected latrines and exhorted people to pay attention to cleanliness. We need to imbibe such lessons in our daily life.

We Stand Corrected

Humans are the only species to have overpowered all other animals, and taken control of the whole planet. Now it stands humbled by a microorganism. We would do well to keep in mind that at the end of the day, we are biological organisms in the great chain of being, dependent on other organisms. Humankind's craving to control nature and exploit all its resources for profit can be wiped out, or severely disengaged, by an organism we can't even see with the naked eye.

This new virus strikes beyond man-made distinctions of religion, race and region. Interdependency is also something we tend to overlook in normal times. I have often referred to the Sanskrit dictum, 'Vasudhaiva kutumbakam' — the whole world is a family. Today, it turns out to be truer than ever before. Faced with an extraordinary crisis, most people tend to be selfish. But this is one calamity that teaches us to think equally of others.

Heavy Dose of Precautions

Though voluntary services through social mobilisation are not encouraged due to the highly contagious nature of Covid-19, every citizen can contribute towards raising awareness — and by refraining from spreading panic, taking prudent precautions.

Those who can should also share resources, especially with less resourceful neighbours, and senior citizens who are vulnerable to the disease. I join you in reaffirming our resolve to come out of the present crisis at the earliest, stronger than ever as a nation.

दैनिक भास्कर

Date:20-03-20

बीच में इस्तीफा देने वाले न लड़ सकें उपचुनाव

डॉ. वेदप्रताप वैदिक, (भारतीय विदेश नीति परिषद के अध्यक्ष)

मध्य प्रदेश की राजनीति ने कई बुनियादी सवाल खड़े कर दिए हैं। सबसे पहला सवाल तो यही है कि भोपाल में कमलनाथ सरकार टिकेगी या नहीं? क्या अन्य प्रदेशों में भी कांग्रेस का वही हाल होने वाला है, जो मध्य प्रदेश में हो रहा है? वर्तमान संकट में राज्यपाल और विधानसभा अध्यक्ष की भूमिकाओं का निर्वाह क्या सही तरीके से हो रहा है? क्या दोनों पार्टियों के नेता और विधायकों का आचरण लोकतंत्र की गरिमा तो नहीं गिरा रहा है? इस तरह के संकटों से बचने के तात्कालिक और दीर्घकालिक तरीके क्या हो सकते हैं? सर्वोच्च न्यायालय में कई दिनों तक भाजपा और कांग्रेस भिड़े रहे। भाजपा का कहना था कि सदन में मत परीक्षण तत्काल हो, जबकि कांग्रेस का तर्क था कि यह तय करना विधानसभा अध्यक्ष का अधिकार है, तब तक इंतजार कीजिए। उधर भाजपा कहती है कि राज्यपाल ने तत्काल मत परीक्षण का निर्देश दिया था। उस पर अध्यक्ष ने अमल क्यों नहीं किया और विधानसभा को 26 मार्च तक के लिए स्थगित क्यों कर दिया? इस सबके बीच, अंतत: सर्वोच्च न्यायालय ने कमलनाथ सरकार को शुक्रवार को बहुमत साबित करने के लिए कह दिया है। इसलिए पहले सवाल का जवाब तो कुछ घंटों में मिल ही जाएगा।

कांग्रेस का यह तर्क कमजोर है कि कोरोना वायरस के कारण 26 मार्च तक सत्र को टाला गया है। यदि यही तर्क है तो संसद के दोनों सत्र कैसे चल रहे हैं? जाहिर है कि 10-12 दिन का यह बहाना इसलिए बनाया गया है कि इस अवधि का उपयोग भटके हुए कांग्रेसी विधायकों की वापसी के लिए किया जा सके। कांग्रेस व भाजपा ने अपने-अपने विधायकों को होटलों व रिसोर्ट में बंद करके रखा हुआ है। यह दृश्य भारतीय लोकतंत्र की प्रतिष्ठा को आंच पहुंचाए बिना नहीं रहेगा। क्या यह लज्जा का विषय नहीं है कि जिन नेताओं को जनता ने चुनकर भेजा है, वे होटलों में छिपते फिर रहे हैं?

यह संतोष का विषय है कि जो 22 विधायक कांग्रेस छोड़ रहे हैं, उन्होंने विधानसभा से इस्तीफा दे दिया है। वे न तो कांग्रेस में रहते हुए अनुशासनहीनता कर रहे हैं और न ही दलबदल विरोधी कानून की आड़ ले रहे हैं। वे इस्तीफा दे रहे हैं, यानी वे शीघ्र ही उप-चुनाव लड़कर फिर से विधानसभा में आएंगे। उन्हें भाजपा टिकट दे ही देगी, यह जरूरी नहीं है। वे दोबारा कांग्रेस में शामिल होकर भी चुनाव लड़ सकते हैं। ऐसे में, मैं समझता हूं कि संसद को दलबदल विरोधी कानून की तरह ऐसा कानून भी बनाना चाहिए कि विधानसभा से इस्तीफा देने वाले विधायकों को अगले चुनाव के पहले चुनाव नहीं लड़ने दिया जाए, यानी उनके उप-चुनाव लड़ने पर रोक हो। ऐसे कठोर प्रावधान से भी दलबदल एकदम नहीं रुक पाएगा, लेकिन उस पर काफी नियंत्रण जरूर हो जाएगा। विधानसभा से बीच में ही इस्तीफा देने वालों की पेंशन भी बंद की जा सकती है।

जहां तक कमलनाथ सरकार का सवाल है तो स्वयं कांग्रेस के प्रादेशिक और राष्ट्रीय नेतृत्व को दूर-दूर तक यह अंदेशा नहीं था कि ज्योतिरादित्य सिंधिया का मामला इतना तूल पकड़ लेगा। कांग्रेस के सारे बागी सदस्य सिंधिया के अनुयायी नहीं हैं। उन्होंने अपने कारणों से भी इस्तीफा दिया है। उनके वे कारण और सिंधिया के इस्तीफे के कारण करीब-करीब एक-जैसे हैं। दोनों की शिकायत यह है कि प्रादेशिक नेतृत्व उनकी परवाह ही नहीं करता और केंद्रीय नेतृत्व तो हमेशा सातवें आसमान पर विराजता है। यदि कमलनाथ और दिग्विजय अपना जौहर दिखाकर इन विधायकों की घर वापसी करवा लेंगे तो भी ये टिकने वाले नहीं हैं। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री के तौर पर कमलनाथ ने सवा साल में कई उल्लेखनीय कार्य किए हैं। लेकिन, उनकी सरकार के सामने चुनौती आसान नहीं है।

विधानसभा या लोकसभा के अध्यक्ष की प्रतिष्ठा की रक्षा तभी हो सकती है, जबकि वह निष्पक्ष हों। राज्यपाल के पद पर भी यही बात लागू होती है। वे दिन लद गए, जब राज्यपाल या विधानसभा अध्यक्ष के आगे विधायक परेड किया करते थे। अब तो सबसे प्रामाणिक तरीका यही है कि सदन में मत परीक्षा हो। यदि राज्यपाल भी यही कह रहे हैं तो इसमें

गलत क्या है? असल में मध्य प्रदेश में जो कुछ हो रहा है, वह कर्नाटक का ही अगला अध्याय है। यह अध्याय राजस्थान और महाराष्ट्र में भी दोहराया जाए तो आश्चर्य नहीं होगा। इसका मूल कारण तो यह है कि कांग्रेस पार्टी का केंद्रीय नेतृत्व डावांडोल हो चुका है। कांग्रेस के युवा नेताओं को अपने भविष्य की चिंता सता रही है। देश के लोकतंत्र के लिए यह गहरी चिंता का विषय है कि विपक्ष निरंतर क्षीण होता चला जा रहा है। उससे बड़ी चिंता इस बात की है कि सत्तापक्ष और विपक्ष, दोनों में आंतरिक लोकतंत्र का अभाव बढ़ता चला जा रहा है। अब सत्ता ही ब्रह्म है।

दैनिक जागरण

Date:20-03-20

तेल के खेल में भारत उठा सकता है आर्थिक फायदा

संपादकीय

दो बड़े तेल उत्पादक देशों सऊदी अरब और रूस के इस झगड़े से भारत के लिए स्वर्णिम मौका आया है, क्योंकि भारत अपनी जरूरत का 83 प्रतिशत से ज्यादा कच्चा तेल आयात करता है। वर्ष 2018-19 में 112 अरब डॉलर का कच्चा तेल भारत ने आयात किया है। चालू वर्ष में जनवरी तक ही 87.7 अरब डॉलर का कच्चा तेल भारत खरीद चुका है। केयर रेटिंग के अनुसार कच्चे तेल के दाम में एक डॉलर की गिरावट से भारत के आयात बिल में 10,700 करोड़ की गिरावट आती है। यानी 30 डॉलर गिरावट का अर्थ सरकार के लिए तीन लाख करोड़ रुपये की बचत है। एक और रिसर्च रिपोर्ट के अनुसार तेल के दाम में 10 डॉलर कीगिरावट से भारत की महंगाई की दर में करीब एक फीसद की गिरावट संभव है। कच्चा तेल सस्ता होने का मतलब यह भी है कि उद्योगों में इस्तेमाल होने वाला कच्चा माल सस्ता होना। हर फैक्ट्री में आने और वहां से निकलने वाला माल जिन ट्रकों पर ढोया जाता है, उनका किराया भी डीजल के दाम से ही तय होता है। सरकार तेल के मूल्यों में कटौती कर उपभोक्ताओं को प्रत्यक्ष लाभ पहुंचा सकती है। भारतीय अर्थव्यवस्था लगातार सुस्ती के दौर से गुजर रही है, जिसका प्रमुख कारण मांग में कमी है। ऐसे में सरकार डीजल और पेट्रोल के मूल्य को घटा कर लोगों की क्रय शक्ति बढ़ा सकती है। क्रयशक्ति में वृद्धि से अंतत: मांग उत्पन्न होगी, जो अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करेगी। फिलहाल पेट्रोल के मूल्य में 2.69 रुपये तथा डीजल के मूल्य में 2.33 रुपये की कटौती हुई है, परंतु मूल्य में गिरावट की तुलना में यह कटौती काफी कम है। सरकार ने तेल के मूल्य गिरने के साथ ही डीजल व पेट्रोल पर एक्साइज ड्यूटी में तीन रुपये प्रति लीटर वृद्धि कर दी है। यह बढ़ोतरी सीधे एक्साइज ड्यूटी में नहीं

की गई है, बल्कि स्पेशल एडिशनल एक्साइज ड्यूटी और रोड इंफ्रास्ट्रक्टर से बढ़ाया गया है। इसका सीधा आशय यह है कि केंद्र सरकार को यह रकम राज्यों के साथ भी नहीं बांटनी होगी। यह पूरी रकम केंद्र सरकार के खाते में ही रहेगी। सरकार की तरफ से कहा गया है कि इस पैसे से उसे इंफ्रास्ट्रक्टर और दूसरे विकास कार्यों पर खर्च के लिए जरूरी रकम मिलेगी। अगर सरकार इंफ्रास्ट्रक्टर पर भी खर्चा करती है, तो भी कई क्षेत्रों में मांग उत्पन्न होती है, जिससे अर्थव्यवस्था को गति मिल सकती है।

नईदुनिया

Date:20-03-20

आपदा के वक्त समझें प्रकृति का संदेश

रामनाथ कोविंद, (लेखक भारत के राष्ट्रपति हैं)

संक्रामक रोग और महामारी मानवजाति के लिए कोई नई बात नहीं है, फिर भी इतने बड़े पैमाने पर कोरोना वायरस का प्रकोप हम सबके जीवनकाल में एक नई घटना है। मेरी संवेदना उन डॉक्टरों, नर्सों, पैरामेडिक्स, स्वास्थ्य-कर्मियों तथा उन अन्य सभी लोगों के साथ भी है, जो अपने जीवन को जोखिम में डालकर मानवजाति की सेवा कर रहे हैं। हमारे समक्ष आए गंभीर संकट की इस घड़ी में देशवासियों ने जिस समझदारी और परिपक्वता का परिचय दिया है, उसकी मैं सराहना करता हूं। उनके सहयोग से सभी संस्थाओं के लिए आपसी समन्वय के साथ मिल-जुलकर काम करना संभव हो पा रहा है। हमारे स्वास्थ्यसेवा संस्थानों ने इस असाधारण और निरंतर बढ़ती हुई चुनौती से निपटने में बहुत मुस्तैदी दिखाई है तथा अपनी दक्षता का परिचय दिया है। हमारे नेतृत्व और प्रशासन ने परीक्षा की इस घड़ी में अपनी क्षमता सिद्ध की है। मैं आश्वस्त हूं कि हम एकजुट होकर इस संकट का सामना कर सकेंगे।

इस महामारी ने हमें अन्य लोगों के साथ सम्मानजनक दूरी बनाए रखने के लिए विवश कर दिया है। अपने विवेक से अथवा चिकित्सकों द्वारा अनिवार्य किया गया एकांतवास हमारी अब तक की यात्रा और हमारे भविष्य के मार्ग पर चिंतन-मनन करने के लिए एक आदर्श अवसर सिद्ध हो सकता है। आज के इस कठिन दौर से गुजरते हुए हमें इस चुनौती को एक अवसर में बदलना चाहिए और यह विचार करना चाहिए कि इस संकट के जरिये प्रकृति हमें क्या संदेश देना चाहती है? प्रकृति से हमें अनेक प्रकार के संकेत मिल रहे हैं, लेकिन मैं केवल कुछ ही पहलुओं पर प्रकाश डालना चाहूंगा।

हम सभी जानते हैं कि इस संकट का सबसे स्पष्ट और पहला सबक है : साफ-सफाई। एहतियात बरतना ही कोरोना वायरस से निपटने का एकमात्र तरीका है और इसके लिए डॉक्टर भी यही सलाह दे रहे हैं कि 'सोशल डिस्टेंसिंग के अलावा सभी लोग साफ-सफाई पर भी ध्यान दें। स्वच्छता अच्छे नागरिक के मूलभूत गुणों में

शामिल है। इन गुणों को कम महत्व दिया जाता रहा है। स्वयं महात्मा गांधी ने इन गुणों को सर्वोच्च प्राथमिकता देने के लिए हमें प्रेरित किया था। यह दक्षिण अफ्रीका और भारत में उनके ऐतिहासिक अभियानों का महत्वपूर्ण अंग रहा।

वर्ष 1896 में गांधी जी भारत यात्रा पर आए हुए थे। उसी समय बंबई में प्लेग फैल गया। प्लेग की रोकथाम के लिए एक स्वयंसेवी के रूप में उन्होंने शौचालयों की स्थिति देखी और लोगों को प्रेरित किया कि वे स्वच्छता पर विशेष ध्यान दें। हमें अपने दैनिक जीवन में गांधी जी की शिक्षाओं को आत्मसात करने की आवश्यकता है और उनकी 150वीं जयंती वर्ष में हम सभी स्वयं को निजी और सार्वजनिक साफ-सफाई के लक्ष्य के प्रति नए उत्साह के साथ समर्पित कर सकते हैं।

हमारे लिए अगला सबक यह है कि हमें प्रकृति का सम्मान करना चाहिए। वास्तव में मनुष्य ही एकमात्र ऐसी प्रजाति है, जिसने अन्य सभी प्रजातियों पर आधिपत्य जमाकर पूरी धरती का नियंत्रण अपने हाथों में ले लिया है। उसके कदम चांद तक पहुंच गए हैं, लेकिन विडंबना देखिए कि इतनी शक्तिशाली मानवजाति इस समय एक सूक्ष्म वायरस के सामने लाचार है। हमें इस तथ्य को ध्यान में रखना होगा कि अंततोगत्वा हम सभी मनुष्य जीवधारी मात्र हैं और अपने जीवन के लिए अन्य जीवधारियों पर निर्भर हैं। प्रकृति को नियंत्रित करने और अपने लाभ के लिए सभी प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करने की तैयारियां छोटे से जीवाणु के एक ही प्रहार से तहस-नहस हो सकती हैं और जीवाणु भी ऐसा, जो माइक्रोस्कोप के बिना दिखाई भी नहीं देता।

हमें याद रखना चाहिए कि हमारे पूर्वज प्रकृति को मां का दर्जा देते थे। उन्होंने हमें सदैव प्रकृति का सम्मान करने की शिक्षा दी, लेकिन इतिहास के किसी मोड़ पर हम उनके दिखाए मार्ग से हट गए और हमने अपने परंपरागत विवेक का परित्याग कर दिया। अब महामारियां और असामान्य मौसम की घटनाएं आम होती जा रही हैं। समय आ गया है कि हम थोड़ा ठहरकर यह विचार करें कि हम रास्ते से कहां भटक गए और यह भी कि हम सही रास्ते पर कैसे लौट सकते हैं?

विश्व समुदाय के लिए समानता का सबक उतना स्पष्ट नहीं रहा है, लेकिन प्रकृति यह संदेश देती रही है कि उसके सामने हम सभी बराबर हैं। जाति, पंथ, क्षेत्र या अन्य किसी मानव निर्मित भेदभाव को वायरस नहीं मानता। तरह-तरह का भेदभाव पैदा करने और अपने-पराये के झगड़े में दुनिया लिप्त रहती है, फिर अचानक एक दिन कोई गंभीर जानलेवा खतरा हमारे समक्ष आ खड़ा होता है। तब हमें यह समझ में आता है कि मनुष्य के रूप में हमारी एक ही पहचान है कि हम सब हर स्थिति में केवल और केवल इंसान हैं।

सामान्य परिस्थितियों में हम लोग परस्पर निर्भरता के जीवन मूल्य की भी अक्सर अनदेखी करते रहते हैं। मैं अपने संबोधनों और वक्तव्यों में प्राय: 'वसुधैव कुटुंबकम् के सद्विचार का उल्लेख करता हूं। इसका अर्थ है कि संपूर्ण विश्व एक ही परिवार है। यह कथन आज के संदर्भ में जितना सार्थक है, उतना पहले कभी नहीं रहा। आज हमारे सामने यह स्पष्ट है कि हर व्यक्ति एक-दूसरे के साथ बहुत गहराई से जुड़ा हुआ है। हम सब वहीं

तक सुरक्षित हैं, जहां तक हम दूसरों की सुरक्षा का ध्यान रखते हैं। हमें केवल मनुष्यों की ही नहीं, अपितु पेड़-पौधों और पशु-पक्षियों की सुरक्षा भी करनी है।

असाधारण संकट आने पर अधिकांश लोग स्वार्थी हो जाते हैं, लेकिन मौजूदा संकट यही सिखाता है कि हमें अपने समान ही दूसरों की भी चिंता करनी चाहिए। यह महामारी अति-संक्रामक है, इसलिए लोगों को एकजुट करके स्वैच्छिक सेवाएं देने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जा रहा है। फिर भी, वायरस की रोकथाम और उन्मूलन के काम में लोग कई तरीकों से सहायता कर सकते हैं। जागरूकता बढ़ाने और घबराहट से बचाने में प्रत्येक नागरिक अपना योगदान दे सकता है। जो समर्थ हैं, वे अपने संसाधनों को साझा कर सकते हैं, विशेषकर कम सुविधा-संपन्न् पड़ोसियों के साथ।

प्रकृति हमें यह स्मरण कराना चाहती है कि हम पूरी विनम्रता के साथ, समानता और परस्पर-निर्भरता के मूलभूत जीवन मूल्यों को स्वीकार करें। यह सबक हमें भारी कीमत चुकाकर प्राप्त हुआ है, लेकिन जलवायु संकट जैसी वैश्विक चुनौतियों का सामना करने और बेहतर साझा भविष्य के निर्माण में यह सबक हमारे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। मैं आप सबके साथ इस सामूहिक संकल्प को दोहराता हूं कि हम सभी मौजूदा संकट से शीघ्रातिशीघ्र बाहर आएंगे और एक राष्ट्र के रूप में अभूतपूर्व शक्ति के साथ आगे बढ़ेंगे।

राष्ट्रीय सहारा

Date:19-03-20

सराहनीय फैसला

संपादकीय

सर्वोच्च अदालत ने सेना के बाद नौसेना में महिला अफसरों के लिए स्थायी कमीशन को मंजूरी देकर आधी आबादी को फिर खुश होने का मौका दिया। पीठ ने केंद्र सरकार की उस दलील को खारिज कर दिया जिसमें महिला अधिकारियों को शारीरिक क्षमताओं को स्थायी कमीशन देने में बाधा बताया गया था। इससे पहले पिछले महीने ही शीर्ष अदालत ने सेना में महिलाओं को स्थायी कमीशन देने का अभूतपूर्व निर्णय सुनाया था। उस वक्त भी केंद्र के तर्कों से अदालत नाखुश थी। अदालत ने तब कहा था कि लैंगिक भेदभाव से महिलाओं के मनोबल में

कमी आएगी और यह कहीं से भी अच्छी बात नहीं है। स्वाभाविक तौर पर जब बाकी क्षेत्रों में महिलाएं बेहतरी की ओर अग्रसर हैं तो फिर सेना में दक्षता और ताकत की कमी की थोथी दलील कहीं से भी न्यायोचित नहीं कही जा सकती है। वैसे भी विश्व के कई देशों मसलन अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, ब्रिटेन, इस्राइल आदि में महिलाएं फौज में बड़ी जिम्मेदारियों का निर्वाह कर रहीं हैं। इस फैसले से जंगी पोतों पर महिला अफसरों की तैनाती का रास्ता साफ हो गया है। निश्चित तौर पर इस फैसले से यह उम्मीद बलवती हुई है कि महिलाओं के लिए नये अवसर खुलेंगे साथ ही पुरुûषवादी मानसिकता में तब्दीली आएगी। आखिर लैंगिक भेदभाव का शिकार महिलाएं कब तलक होती रहेंगी? तकलीफ इस बात की है कि ऐसे फैसलों में सरकार ही रोड़ा बनती है। जबकि अगर सरकार के स्तर पर महिलाओं को बराबरी का हक दिया जाता तो बात ही कुछ और होती। राजनीति हो या कोई और क्षेत्र; महिलाओं ने बेशक बहुत लंबा रास्ता तय किया है। देश की महिलाओं ने कई मौकों पर यह साबित भी कर दिखाया है। शुक्र है, अदालती हस्तक्षेप से न्याय की उम्मीद बनी हुई है। सत्ता में बैठे लोगों को भी यह बात गांठ बांध लेनी चाहिए कि बिला-वजह महिलाओं की प्रगति के रास्तों को अपनी संकीर्ण सोच की वजह से बाधित करने में निहायत बेवकूफाना सोच नहीं है। काबिलियत को मौका मुहैया कराना ही किसी तंत्र का मुख्य ध्येय होना चाहिए। भेदभाव की भावना से ऊपर उठकर लिए गए फैसले ही लंबे वक्त तक स्मृति में बने रहते हैं। एक महीने के दौरान दूसरी बार अदालत के ऐतिहासिक फैसले ने आधी आबादी के लिए वाकई बहुत बड़ी लकीर खींची है

Live हिन्दुस्तान .com

Date:19-03-20

आभासी मुद्राएं चलें, लेकिन उन पर हो कड़ी नजर

राहुल मथान, (साइबर विशेषज्ञ)

लगभग दो साल पहले भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) ने बैंकों और तमाम वित्तीय संस्थानों को यह निर्देश दिया था कि वे आभासी मुद्राओं के लेन-देन को स्वीकार न करें। आरबीआई का यह आदेश न सिर्फ गुमराह करने वाला था, बल्कि पूरी तरह से अनुचित भी था। यह सही है कि आभासी मुद्राओं से गुमनाम लेन-देन किया जा सकता है और इसका इस्तेमाल आतंकी संगठन अपने अवैध कारोबार के लिए कर सकते हैं। हालांकि सच यह भी है कि इसके माध्यम से कानून लागू करने वाली एजेंसियां कहीं बेहतर तरीके से अपनी फॉरेंसिक क्षमता सुधार सकती हैं और गुमनाम अपराधियों या उन आतंकियों तक पहुंच सकती हैं, जो अपने नापाक मकसद के लिए प्रौद्योगिकी का दुरुपयोग करते हैं। किसी सेवा पर प्रतिबंध लगा देने मात्र से हम उसका इस्तेमाल नहीं रोक सकते, क्योंकि ऐसी रोक का पालन सिर्फ वही करते हैं, जो कानूनी तरीके से इसका उपयोग कर रहे होते हैं।

अब जबकि देश की शीर्ष अदालत ने रिजर्व बैंक के इस निर्देश को रद्द कर दिया है और बैंकों को क्रिप्टोकरेंसी संबंधी सेवाएं देने की इजाजत दे दी है, तब यह जानना जरूरी है कि हमारे केंद्रीय बैंक से कहां चूक हुई और सर्वोच्च न्यायालय के आदेश का क्या मतलब है? यह स्पष्ट है कि रिजर्व बैंक का फैसला आभासी मुद्राओं में कारोबार को रोकने में कतई कारगर साबित नहीं हुआ। ऐसा इसलिए, क्योंकि आभासी मुद्राओं को जब तक भारतीय मुद्रा में नहीं बदलते थे, तब तक

उन मुद्राओं के अस्तित्व पर किसी तरह का वास्तविक या परोक्ष प्रतिबंध लागू नहीं था। यानी जो लोग आभासी मुद्राओं में लेन-देन करके अपनी सेवाओं का आदान-प्रदान कर रहे थे, उन पर यह नियम लागू ही नहीं था। रिजर्व बैंक का निर्देश तो बस उन्हें प्रभावित कर रहा था, जो आभासी मुद्राओं की भारतीय मुद्रा में अदला-बदली के कारोबार में थे।

इन्हीं संस्थानों के संदर्भ में, जिन्हें अपना कारोबार चलाने का कोई माध्यम नहीं बचा, सर्वोच्च अदालत ने कहा कि बैंकिंग चैनलों तक पहुंच किसी भी कारोबार की जीवन-रेखा है। यहां रिजर्व बैंक को यह बताना चाहिए था कि प्रतिबंध तार्किक है और एक खास मकसद को पूरा करने के लिए लगाया गया है, और इससे बेहतर कोई दूसरा उपाय नहीं है। उसे साबित करना चाहिए था कि उस मकसद को पाने और लोगों के अधिकारों को सीमित करने में एक वाजिब रिश्ता है। यह दावा नहीं किया जा सकता कि आभासी मुद्राएं महज इसीलिए प्रतिबंधित कर देनी चाहिए, क्योंकि इससे मनी-लॉड्रिंग संभव है और काले धन का खेल चल सकता है। इसकी बजाय उसे यह बताना चाहिए था कि इन मुद्राओं से रिजर्व बैंक की अधीनस्थ वित्तीय संस्थाओं की कार्य-क्षमता प्रभावित की गई है। केंद्रीय बैंक यह बताने में पूरी तरह असमर्थ रहा कि आभासी मुद्रा के लेन-देन ने पिछले पांच वर्षों में किसी भी समय आरबीआई निर्देशित वित्तीय संस्थानों की कार्य-क्षमता पर प्रतिकूल असर डाला। लिहाजा अदालत ने यह स्पष्ट किया कि निवारक उपायों के इस्तेमाल का पूरा अधिकार होने के बावजूद रिजर्व बैंक जब इस प्रावधान के तहत कार्रवाई कर रहा हो, तब उसे कम से कम यह तो बताना ही चाहिए कि आभासी मुद्राओं का लेन-देन करने वाले वित्तीय संस्थानों को किस तरह का नुकसान पहुंचा। इसीलिए ऐसे किसी साक्ष्य के अभाव में इस निर्देश को रद्द किया जाता है।

सवाल यह है कि क्रिप्टोकरेंसी के संदर्भ में सुप्रीम कोर्ट के इस आदेश का अब क्या मतलब है? शीर्ष अदालत के इस आदेश से इतना तो जाहिर है कि आरबीआई के पास आभासी मुद्राओं के नियमन का पूरा अधिकार है। लिहाजा प्रतिबंध का उसका निर्देश बेशक रद्द कर दिया गया है, लेकिन वह बिटक्वाइन या अन्य क्रिप्टोकरेंसी का नियमन कर सकता है। यानी आने वाले दिनों में हम ऐसे प्रावधान जारी होने की उम्मीद कर सकते हैं, जो आभासी मुद्राओं में लेन-देन और आभासी मुद्राओं की अदला-बदली, दोनों पर लागू होंगे। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि ये नियम अन्य देशों में अपनाए गए नियमों की तुलना में कहीं अधिक सख्त साबित हो सकते हैं, क्योंकि अदालत ने यही माना है कि विकासशील अर्थव्यवस्था के लिए अधिक कड़े नियम की दरकार है। आभासी मुद्राओं के प्रतिकूल प्रभावों को देखते हुए ऐसा करना जरूरी भी है।

THE HINDU

Date:19-03-20

Competitive impropriety

Retired judges should not accept a Parliament seat lest it be seen as a political reward

Editorial

The President's nomination of former Chief Justice of India, Ranjan Gogoi, as a Rajya Sabha member so soon after his retirement will be seen as a crass example of a regime rewarding a member of the judiciary for meeting its expectations during his tenure. It will be futile to argue that it is a well-deserved recognition for an eminent jurist. The gap of four months between his retirement and nomination, and the fact that a series of decisions in his court were in seeming conformity with the present government's expectations militate against such a justification. The second argument, that there have been instances of retired Chief Justices being nominated to the Upper House or appointed Governors, does not cut ice either, as it is nothing more than a dubious claim to the same level of impropriety. In fact, references to the late CJI Ranganath Mishra and Justice Baharul Islam as valid precedents reflect quite poorly on the executive, and amount to competitive impropriety. There continues to be a perception that these were lapses in propriety. Justice Mishra's commission of inquiry absolved the Congress from any organisational responsibility for the 1984 anti-Sikh riots. Justice Islam exonerated a Congress Chief Minister of wrong-doing in a financial scandal in Bihar. The party had helped Justice Islam move both ways between Parliament and the judiciary. He quit the Upper House in 1972 to take office as a High Court judge. In 1983, he quit as a Supreme Court judge to contest an election.

Mr. Gogoi's appointment cannot be seen, as he has sought to project, as a way of ensuring cohesion between the judiciary and the legislature. He no longer represents the judiciary, and his contribution will be limited to the expertise and knowledge he can bring to debates in Parliament. Any attempt to create 'cohesion' between the two wings would necessarily encroach on the judiciary's role as a restraining force on the executive and legislature. He should have rejected the offer, considering not only the nature of the judgments that Benches headed by him had delivered in the Ayodhya dispute and Rafale investigation, and the administrative decisions he had made in prioritising some cases above matters such as the validity of electoral bonds and Kashmir's altered status. These will be coloured, in retrospect. Also, he ought to have followed the example of his former colleagues who had declared that they would not accept any post-retirement work from the government. And one cannot forget that his tenure was clouded by an employee's complaint of sexual harassment, which acquired greater credibility after she was reinstated following his exoneration by a committee of judges. As for the government, making such an offer to a just-retired CJI is not mere brazenness. It indicates an alarming intention to undermine judicial authority so that the elected executive is seen as all-powerful.

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date:19-03-20

Virus and opportunity

Social distancing, work from home, provide a template for paper-less courts

Hitesh Jain, [Senior lawyer based in Mumbai and managing partner, Parinam Law Associates]

In the past few days, "corona" is a word that has dominated every discussion. But this crisis also presents an opportunity. It has given us a glimpse into how we may solve overcrowding problems in the future, whether in terms of traffic, in healthcare facilities or the courtroom. If social distancing and working from

home is a way to cope with the coronavirus epidemic, could these form the basis for technology-guided solutions in the future as well?

A couple of years ago, I spoke at an event about the concept of paperless and people-less courts. This an achievable and realistic goal. We just have to change our attitude. The legal curriculum has to change. Future generations of lawyers should study not only legal subjects but also technology and management. We have to think out of the box and change mindsets.

Paperless courts have been a topic of discussion in the last few years, and we can see some steps being taken in that direction. But old habits die hard.

Just as continuous legal education is part of a lawyer's routine, adaptation to technology must also become a professional goal. By using video evidence, video-conferencing and telepresence technologies effectively, a paper-less and crowd-less court can indeed become a reality. By leading from the front in this area, India will be also doing its part to combat global warming. With the reduction or near elimination of paper, and a reduced crowd at courts, there will be a significant reduction in the carbon footprint of the country.

Technology can be indeed a solution for the legal fraternity while dealing with both contentious and non-contentious matters. We must invest in virtual courtrooms and I am convinced that, barring a few exceptions, hearings can be conducted on a virtual basis. This will eliminate paper and it will eliminate crowding. But it will certainly not eliminate work and the workplace. In the era of high-speed internet and other advanced technologies, we can change our future and create opportunities for everyone. Virtual courtrooms and case management, and the use of technology, data science and artificial intelligence will address the issue of judicial delay that has clogged our legal system. The rule of law will be upheld in the true sense when the justice delivery system will become efficient, people-friendly and citizens can receive legal redress in a time-bound manner.

We have an opportunity to transform the relationship between the law and the community by increasing access to justice, removing the disadvantages engendered by increasing inequality.

Opinion | India needs to restrict the use of crowded public transport to prevent transmission of Covid-19

But most of all, we can address the increasing demands of people. The administration of justice will need a new approach, new strategy and more empowered decision-making in the digital world. Most of all, the adaptability and agility of the modern judiciary in leading a court system that keeps pace with the rapidly changing demands of society will be on test.

COVID-19 has forced people to maintain social distance, work from home – a minimum number of people, purely based on need, come to the court. But this can be extended beyond the current crisis. Let's convert this crisis into an opportunity. Let us debate and explore the possibilities of how we can change in the future.

If 2020 will be dominated by the effects of the coronavirus, the year should also be one when we learnt from the crisis. We owe this to New India. Let's challenge the status quo.